पर्यावरण और आज का मानव

आभा झा

पर्यावरण का तात्पर्य है हमारा वातावरण। जिसमें हम और हमारे बच्चे रहते हैं। इसी में सभी जीव-जंतु अऔर पेड़-पौधे पलते हैं। पर्यावरण में हमारी धरती, जल और वायुमंडल आते है। ये सभी प्रकृति के ही अंग है। प्रकृति एवं मानव का संबंध आदिकाल से है। प्रकृति आदि मानव से लेकर आधुनिक मानव तक उसकी सहयात्री रही है। सौन्दर्य और भावुकता की सबसे पहली शिक्षा उसी से मनुष्य को मिली है। रंग-विधान और उल्लास के साथ-साथ चक्राकार कालगति और सुख-दु:ख की सबसे सरल और सार्थक अभिव्यंजना प्रकृति ही करती है। केवल वर्ण्य विषय ही नहीं कविता की प्रेरणा भी देती है। वह मनुष्य की सबसे पुरातन किन्तु सबसे जीवन्त सहचरी है। प्रकृति सहज और नैसर्गिक हैं। मनुष्य और प्रकृति दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। प्रकृति और मानव का संबंध यानि साहित्य और प्रकृति का संबंध । क्योंकि साहित्य की रचना मानव ही करता है।

प्रकृति और मानव की तरह प्रकृति और साहित्य भी आपस में अटूट रूप से संबंधित है। प्रकृति की संस्तुति सर्वदा महाकाव्य, खंडकाव्य, कहानी, निबंध, संस्मरण तथा उपन्यास आदि के माध्यम से की गई है। वर्डस्वर्थ के 'डैफोडिल्स', टेनीसन की 'ब्रेक-ब्रेक', कीट्स और शैली के प्रकृति - चित्रण आदि प्रकृति की महत्ता को स्पष्ट करते हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय साहित्यों में भी प्रकृति - चित्रण एवं उनकी महत्ता कूट-कूट कर भरी है। जैसे - कालीदास का मेघदुत और ऋतुसंहार, प्रेमचन्द के उपन्यासों में ग्राम्य-जीवन का प्रकृति - चित्रण, सुमित्रानन्दन पंत की लावण्यमयी प्राकृतिक कविताएँ , अज्ञेय की 'एक बूंद सहसा उछली' जय शंकर प्रसाद की कामायनी का प्रारंभ 'हिमगिरि के उत्तुंग शिखर से' आदि सभी प्रकृति की महत्ता को स्पष्ट करते हैं। विश्व के लगभग सभी महान साहित्यकारों ने प्रकृति की छटा का वर्णन मुक्त कंठ से किया है।

पंत का प्रारंभिक जीवन प्रकृति के गोद में बीता है। प्रकृति के सौंदर्य ने उसकी कवि प्रतिभा पर जादू किया और वे अपनी कविता में पर्वतीय प्रकृति की सरल और चंचल सुन्दरता को अभिव्यक्त करने लगे। इनकी रचना 'वीणा' में प्रकृति सौंदर्य के विभिन्न अंगो का सरस वर्णन है। प्रकृति की स्निग्ध सुन्दर गोद में उन्हें माता का वात्सल्यमय ममत्व दिखाई दिया और वे प्रकृति को ही माँ संबोधित करने लगे -

''माँ मेरे जीवन की हार,
तेरा उज्जवल-हृदय हार हो अश्रु-कणों का यह उपहार।''

कवि पंत ने प्रकृति को माँ व सहचरी रूप में देखा है। कवि प्रकृति को सहचरी के रूप में देखते हुए कहता है -

सिखा दो ना, हे मधुप कुमारि।
मुझे भी अपने मीठे गान,
कुसुम के चुने कटोरो से,
करा दो न, कुछ-कुछ मधुपान।
नवल कलियों के धीरे झूम,
प्रसूनों के अधरों को चूम;
मुदित, कवि-सी तुम अपना पाठ
सीखो हो सखि! जग में घूम;
पिला दो न, तब हें सुकुमारि,
इसी से थोड़े मधुमय गान;
कुसुम के खुले कटोरे से,
करा दो न, कुछ-कुछ मधुपान।

पंतजी विशेषतया प्रकृतिमूलक रहस्यवादी कवि माने जाते हैं' और आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रकृति रहस्यवाद का प्रवर्तक भी माना गया है तथा प्रकृति की ओट में उन्होंने प्रिय की झाँकी निहारी है -

शरद् के निर्मल तिमिर की ओट में
नव मिलन के पलक दल सा झूमता
कौन मादक कर मुझे है छू रहा
प्रिय तुम्हारी मुकता की आड़ से?

कवि प्रसाद को प्रेम और सौंदर्य का कवि माना जाता है। कवि ने अपने प्रेम और सौंदर्य भावना की अभिव्यक्ति प्रकृति के माध्यम से की है। प्रसाद ने प्रकृति के जैसे मधुर रमणीय दृश्यों की योजना अपने काव्य में की है, किसी दूसरे कवि ने नहीं। प्रसाद के लिए प्रकृति सजीव थी और उन्होने सर्वदा उसमें चैतन्य की अनुभूति की है। प्रकृति उनके लिए केवल मानव भावों को जाग्रत करने का साधन नहीं अपितु एक ऐसी सहचरी है जो मानव के साथ हँसती, रोती, उद्वेलित होती और उसको सांत्वना प्रदान करती है। तथा मानव उसके साहचर्य में प्रसन्न होता है। साथ ही प्रसाद का प्रकृति उन्हें परम तत्व के दर्शन कराता है। जैसे -

लहरों में यह क्रीड़ा चंचल, सागर का उद्वेलित अंचल।

है पोंछ रहा आँखें छल-छल, किसने वह चोट चलाई है?

प्रसाद ने रहस्यवादी कवियों की भाँति प्रकृति के माध्यम से प्रिय अर्थात ब्रह्म को खोजने का सुन्दर प्रयास भी किया है।

चमकूँगा धूल कणों में सौरभ हो उड़ जाऊँगा।
पाऊँगा कभी तुम्हें तो ग्रह पथ में टकराऊँगा।।

कवि ने प्रकृति का उपयोग उसका मानवीकरण करके भी किया है तथा उसे संध्या, उषा, चन्द्रिका आदि प्राकृतिक पदार्थ सचेतन व मुखर जान पड़ते हैं -

बीती विभावरी जाग री!
अम्बर घनघट में डुबो रही
तारा-घट ऊषा नागरी।

प्रसाद ने जीवन की विभिन्न अवस्थाओं, भावनाओं व व्यापारों का चित्रण करने के लिए प्रकृति प्रांगण से ही प्रतीक ग्रहण किए हैं। उदाहरणार्थ

झझा झकोर गर्जन था बिजली थी नीरद माला।
पाकर इस शुन्य हृदय को सबने आ डेरा डाला।।

प्रसाद, पंत की तरह नागार्जुन ने भी अपने काव्य में प्रकृति चित्रण किया है। नागार्जुन किसान कुल के थे। किसान कुल में जन्म लेने के कारण कवि का प्रकृति से अंतरंग परिचय और सघन लगाव हो स्वाभाविक है। नागार्जुन अपने गाँव से दूर, देश से दूर पड़े हुए लंकावास के दिनों में जब अपनी पत्नी का 'सिन्दुर तिलकित भाल' याद करते हे तो काम क्रीड़ा उत्साह का उतना प्रदर्शित नहीं करते जितना उस गाँव से, उस देश से ममता व्यक्त करते हैं और लिखते हैं -

याद आता मुझे अपना वह 'तरउनी' ग्राम
याद आती लीचियाँ, वे आम
याद आते मुझे मिथिला के रुचिर-भू-भाग
याद आते धान
याद आते कमल, कुमुदिनी और तालमखान
याद आते शस्य-श्यामल जनपदों के
नाम-गुण-अनुसार ही रक्खे गए वे नाम
याद आते वेणुवन के नीलिमा के निलय अति-अभिराम।

नागार्जुन बहुत दिनों के बाद जब अपने गाँव आते है तब जी भरकर 'पकी सुनहली फसलों

की मुस्कान' देखते है,

'अपनी गँवई पगडंडी की चन्दनवर्णी धूल' छूकर अपूर्व कृतार्थ अनुभव करते हैं। वे वहाँ रहते हैं और वहाँ के एक-एक पेड़ - पौधों को, प्रकृति को पहचानते हैं।

नये-नये हरे -हरे पात .....
प्रकृति ने ढँक लिए अपने सब गात
पोर-पोर डाल-डाल
पेट-पीठ और दायरा विशाल
ऋतुपति ने कर लिए खूब आत्मसात.....

हमारे कवियों की प्रकृति क्या आज सुरक्षित है? क्या वह हरी-भरी प्रकृति आज सही सलामत है? क्या नागार्जुन का गाँव आज है? क्या ये प्राकृतिक दृश्य हमें गाँवों में भी दृष्टिगत होते है? अगर हम सच्चे अर्थो में कहें तो नहीं। इसका मूल कारण कौन है? हम स्वयं यानि कि आज का मानव।

प्रकृति अपनी ओर से सभी संघटकों का अनुपात हमेशा ठीक बनाए रखने की कोशिश करती है पर मानव प्रकृति को छेड़कर उसकी मूल संरचना में व्यवस्था में दखल दांजी करता है फलस्वरूप पर्यावरण की दशा बिगड़ती है। वह भूल जाता है कि वह प्रकृति की संतान है और प्रकृति उसकी पोषक - रक्षक। मनुष्य उसे मात्र भोग्या समझकर उस पर अपना प्रभुत्व जामाना चाहता है। यही वह सबसे बड़ी भूल करता है और स्वामी बनने की लालसा में प्रकृति के पतन का कारण बन जाता है।

आज मानव आधुनिकता और औद्योगिकरण की दौर में इतना आगे बढ़ गया है कि प्रकृति की ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता। वह विकास की दौड़ में होड़-सी लगाकर अधिकाधिक औद्योगिकरण करता जा रहा है जिसके कारण ऊर्जा के प्राकृतिक भंडारों का खुलकर अपव्यय हो रहा है और ये भंडार सीमित हैं। कुछ वर्षो में समाप्त हो जाएँगे। कोयला बनाने, खेती तथा बस्तियों के विस्तार के लिए वनों की अंधाधुंध कटाई हो रही है। जिसमे वायुमंडल में कार्बनडाइआक्साइड की वृद्धि हो रही है। पेड़-पौधे कार्बनडाइआक्साइड का उपयोग अपना भोजन बनाने में कर लेते हैं, लेकिन वनों की कटाई से इसकी वृद्धि रोकनी असंभव प्रतीत होती है।

वस्तुतः मानव द्वारा वनों की अंधाधुंध कटाई, कलकारखानों का अधिक से अधिक विकास, वैज्ञानिक उपकरणों का अधिकाधिक विकास ये सभी कारक है वातावरण के प्रदूषण के । फैक्ट्रियों से उठता धुँआ, रासायनिक दूषित जल का नदियों में बहाव विभिन्न बिमारियों का

वाहक है। पेड़ों की अंधधुंध कटाई, सिमटते जंगलों की वजह से रेगिस्तान का बढ़ता प्रसार, भूमि कटाव से बाढ़ का खतरा।

आज का युग पर्यावरणीय चेतना का युग है। हर व्यक्ति पर्यावरण की बात करता है, प्रदूषण से बचाव के उपाय सोचना है। पर ये बातें मात्र सोचने तक ही सीमित होकर रह जाती है। विकास की अंधाधुंध दौड़ में पर्यावरण सुरक्षा महज एक नारा बनकर रह गया है।

संदर्भ - ग्रन्थ सूची

१) वायु एवं जल प्रदुषण - संजय कुमार गम्भीर

२) प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएँ (आलोचना एवं व्याख्या) - दुर्गाशंकर मिश्र

३) कवि प्रसाद (आलोचनात्मक अध्ययन) दुर्गाशंकर मिश्र

४) हिन्दी पाठ संचयन